

स्वतंत्रता के बाद भारत की विदेश नीति का विकास और गुटनिरपेक्ष आंदोलन की भूमिका

नरेन्द्र कुमार¹, प्रो. डॉ. संगीता माथुर²

¹शोधार्थी, कला एवं मानविकी संकाय, कैरियर प्वाइंट विश्वविद्यालय, कोटा

²शोध पर्यवेक्षक एवं अधिष्ठाता, कला एवं मानविकी संकाय, कैरियर प्वाइंट विश्वविद्यालय, कोटा

सार—1947 में स्वतंत्रता के बाद भारत के सामने राष्ट्रीय विकास के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वतंत्र एवं सम्मानजनक पहचान स्थापित करने की चुनौती थी। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात अमेरिका और सोवियत संघ के बीच शीत युद्ध की परिस्थितियों में भारत ने किसी शक्ति-गुट का हिस्सा बनने के बजाय स्वतंत्र विदेश नीति अपनाई। इस नीति पर स्वतंत्रता आंदोलन के आदर्शों का प्रभाव रहा, जिसके अंतर्गत उपनिवेशवाद, नस्लवाद और विदेशी प्रभुत्व का विरोध तथा विश्व शांति, संप्रभुता, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को प्राथमिकता दी गई। जवाहरलाल नेहरू ने भारत की प्रारंभिक विदेश नीति को दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन के विकास में सक्रिय योगदान दिया। 1955 का बांडुंग सम्मेलन तथा 1961 का बेलग्रेड शिखर सम्मेलन इसके महत्वपूर्ण पड़ाव रहे। भारत ने विकासशील देशों के हितों, निरस्त्रीकरण, उपनिवेशवाद के अंत और वैश्विक आर्थिक असमानता जैसे मुद्दों को प्रभावी ढंग से उठाया। 1962 के भारत-चीन युद्ध तथा 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध ने विदेश नीति में सुरक्षा और रणनीतिक हितों के महत्व को बढ़ाया। 1991 के बाद सोवियत संघ के विघटन और आर्थिक उदारीकरण के परिणामस्वरूप भारत की विदेश नीति में आर्थिक हित, व्यापार, निवेश, ऊर्जा और तकनीकी सहयोग प्रमुख हुए। वर्तमान में गुटनिरपेक्षता के पारंपरिक स्वरूप की अपेक्षा रणनीतिक स्वायत्तता अधिक महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, भारतीय विदेश नीति आदर्शवाद, राष्ट्रीय हित, सुरक्षा और आर्थिक विकास के संतुलन के साथ निरंतर विकसित हुई है।

मुख्य शब्द—भारत, विदेश नीति, गुटनिरपेक्ष आंदोलन, शीत युद्ध, नेहरू, राष्ट्रीय हित, रणनीतिक स्वायत्तता।

I. परिचय

विदेश नीति किसी भी देश की अंतरराष्ट्रीय पहचान और उसके अन्य देशों के साथ संबंधों को निर्धारित करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। इसके माध्यम से कोई देश अपने राष्ट्रीय हितों, सुरक्षा, आर्थिक आवश्यकताओं और राजनीतिक उद्देश्यों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आगे बढ़ाता है। भारत ने 1947 में स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद एक ऐसी विदेश नीति विकसित करने का प्रयास किया जो देश की स्वतंत्रता, संप्रभुता और राष्ट्रीय हितों की रक्षा कर सके। स्वतंत्रता के समय भारत अनेक गंभीर समस्याओं से गुजर रहा था। देश का विभाजन हो चुका था, बड़ी संख्या में लोग विस्थापित हुए थे और आर्थिक स्थिति भी मजबूत नहीं थी। गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा और विकास की कमी जैसी समस्याएँ देश के सामने थीं। ऐसे समय में भारत के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शांतिपूर्ण वातावरण और सभी देशों के साथ सहयोग आवश्यक था।

स्वतंत्रता के समय विश्व की राजनीतिक स्थिति भी तेजी से बदल रही थी। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिका और सोवियत संघ दो प्रमुख महाशक्तियों के रूप में सामने आए। दोनों के बीच राजनीतिक विचारधारा, आर्थिक व्यवस्था और सैन्य शक्ति को लेकर प्रतिस्पर्धा बढ़ने लगी। इस स्थिति ने विश्व को मुख्य रूप से दो शक्ति-गुटों में बाँट दिया। इसे शीत युद्ध के नाम से जाना गया। कई देशों पर इन दोनों गुटों में से किसी एक के साथ जुड़ने का दबाव था। भारत ने ऐसी स्थिति में किसी भी शक्ति-गुट का हिस्सा बनने के बजाय स्वतंत्र विदेश नीति अपनाने का निर्णय लिया।

भारत की विदेश नीति के निर्माण में स्वतंत्रता आंदोलन के विचारों का भी महत्वपूर्ण प्रभाव था। भारत स्वयं लंबे समय तक औपनिवेशिक शासन के अधीन रहा था, इसलिए उसने अन्य देशों की स्वतंत्रता और संप्रभुता का समर्थन किया। भारत ने उपनिवेशवाद, नस्लवाद और विदेशी हस्तक्षेप का विरोध किया तथा विश्व शांति और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को महत्व दिया।

जवाहरलाल नेहरू ने स्वतंत्र भारत की विदेश नीति को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनका मानना था कि भारत को अंतरराष्ट्रीय मुद्दों पर अपने निर्णय स्वतंत्र रूप से लेने चाहिए और किसी भी बड़ी शक्ति के दबाव में नहीं आना चाहिए। इसी सोच ने आगे चलकर गुटनिरपेक्षता की नीति को मजबूत आधार दिया। भारत ने शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व, आपसी सम्मान और विवादों के शांतिपूर्ण समाधान का समर्थन किया। गुटनिरपेक्षता भारत की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण आधार बनी। इसका उद्देश्य केवल महाशक्तियों से दूरी बनाए रखना नहीं था, बल्कि भारत और अन्य विकासशील देशों को अपने राष्ट्रीय हितों के अनुसार स्वतंत्र निर्णय लेने का अवसर प्रदान करना था। भारत ने एशिया और अफ्रीका के नए स्वतंत्र देशों के साथ सहयोग बढ़ाया और उनके राजनीतिक तथा आर्थिक हितों को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर उठाया।

समय के साथ भारत की विदेश नीति में कई परिवर्तन आए। 1962 के भारत-चीन युद्ध ने राष्ट्रीय सुरक्षा के महत्व को बढ़ाया, जबकि 1971 के युद्ध और बाद की घटनाओं ने भारत की क्षेत्रीय भूमिका को प्रभावित किया। 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद व्यापार, निवेश, तकनीक और आर्थिक विकास भी विदेश नीति के महत्वपूर्ण हिस्से बन गए। वर्तमान समय में भारत गुटनिरपेक्षता की मूल भावना को रणनीतिक स्वायत्तता के रूप में आगे बढ़ा रहा है। इस प्रकार भारत की विदेश नीति का विकास राष्ट्रीय हित, सुरक्षा, आर्थिक विकास और अंतरराष्ट्रीय सहयोग के बीच संतुलन बनाने की एक निरंतर प्रक्रिया रही है।

II. भारत की विदेश नीति के प्रमुख आधार

स्वतंत्रता के बाद भारत ने अपनी विदेश नीति का निर्माण देश की परिस्थितियों और राष्ट्रीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए किया। भारत की विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य देश की संप्रभुता, सुरक्षा और राष्ट्रीय हितों की रक्षा करना था। इसके साथ ही भारत ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शांति, सहयोग और समानता को भी महत्व दिया। भारत का मानना था कि किसी भी देश की विदेश नीति केवल सैन्य शक्ति पर आधारित नहीं होनी चाहिए, बल्कि उसमें मानवीय मूल्यों और अंतरराष्ट्रीय सहयोग का भी स्थान होना चाहिए।

राष्ट्रीय हित भारत की विदेश नीति का सबसे महत्वपूर्ण आधार रहा है। स्वतंत्रता के शुरुआती वर्षों में भारत के लिए आर्थिक विकास, राष्ट्रीय सुरक्षा और राजनीतिक स्थिरता प्रमुख आवश्यकताएँ थीं। समय के साथ राष्ट्रीय हित का दायरा बढ़ा और इसमें व्यापार, ऊर्जा सुरक्षा, तकनीक, निवेश तथा वैश्विक बाजारों में भारत की स्थिति जैसे विषय भी शामिल हो गए। भारत ने विभिन्न देशों के साथ संबंध विकसित करते समय अपने दीर्घकालीन राष्ट्रीय हितों को प्राथमिकता दी।

विश्व शांति भी भारत की विदेश नीति का महत्वपूर्ण आधार रही है। भारत ने युद्ध और हथियारों की होड़ के बजाय बातचीत, सहयोग और कूटनीतिक समाधान का समर्थन किया। भारत ने संयुक्त राष्ट्र की भूमिका को महत्व दिया और अंतरराष्ट्रीय विवादों को शांतिपूर्ण तरीके से हल करने की आवश्यकता पर जोर दिया। भारत ने परमाणु हथियारों के प्रसार और हथियारों की अनावश्यक प्रतिस्पर्धा को कम करने की दिशा में भी अपनी आवाज उठाई।

शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धांत ने भारत की प्रारंभिक विदेश नीति को महत्वपूर्ण दिशा दी। भारत का मानना था कि अलग-अलग राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थाओं वाले देश भी एक-दूसरे के साथ शांतिपूर्वक रह सकते हैं। इसी दृष्टिकोण के तहत भारत ने 1954 में पंचशील के सिद्धांतों को महत्व दिया। पंचशील में एक-दूसरे की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान, एक-दूसरे पर आक्रमण न करना, आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना, समानता एवं पारस्परिक लाभ तथा शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व जैसे प्रमुख सिद्धांत शामिल थे।

उपनिवेशवाद और नस्लवाद का विरोध भी भारतीय विदेश नीति की एक महत्वपूर्ण विशेषता रही। भारत स्वयं लंबे समय तक औपनिवेशिक शासन के अधीन रहा था, इसलिए उसने एशिया और अफ्रीका के स्वतंत्रता आंदोलनों का समर्थन किया। भारत ने विदेशी शासन, राजनीतिक दमन और नस्लीय भेदभाव का विरोध किया। विशेष रूप से दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद नीति के खिलाफ भारत ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आवाज उठाई। इन सभी आधारों ने भारत को एक ऐसी विदेश नीति विकसित करने में सहायता दी जिसमें राष्ट्रीय हित और अंतरराष्ट्रीय जिम्मेदारी के बीच संतुलन दिखाई देता है। भारत ने किसी एक शक्ति पर निर्भर रहने के बजाय विभिन्न देशों के साथ सहयोग बनाए रखने का प्रयास किया। यही दृष्टिकोण आगे चलकर गुटनिरपेक्ष आंदोलन में भारत की सक्रिय भूमिका का आधार बना और वर्तमान समय में रणनीतिक स्वायत्तता की नीति में भी दिखाई देता है।

III. जवाहरलाल नेहरू की भूमिका

जवाहरलाल नेहरू स्वतंत्र भारत की विदेश नीति के प्रमुख निर्माताओं में से एक थे। वे स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री होने के साथ-साथ लंबे समय तक विदेश मंत्री भी रहे। इसलिए स्वतंत्रता के बाद भारत के अंतरराष्ट्रीय संबंधों और विदेश नीति की दिशा तय करने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। नेहरू का मानना था कि भारत को अपनी

विदेश नीति किसी अन्य देश के दबाव में नहीं, बल्कि अपने राष्ट्रीय हितों और स्वतंत्र सोच के आधार पर निर्धारित करनी चाहिए।

स्वतंत्रता के समय विश्व दो प्रमुख शक्ति-गुटों में बँटा हुआ था। एक ओर अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिमी देशों का गुट था और दूसरी ओर सोवियत संघ के नेतृत्व में समाजवादी गुट था। नेहरू ने भारत को किसी सैन्य गठबंधन का हिस्सा बनाने के बजाय दोनों गुटों से आवश्यकतानुसार संबंध बनाए रखने की नीति अपनाई। उनका मानना था कि किसी एक शक्ति-गुट से जुड़ने से भारत की स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता प्रभावित हो सकती है। इसी विचार ने आगे चलकर भारत की गुटनिरपेक्ष नीति को मजबूत आधार प्रदान किया।

नेहरू की विदेश नीति में विश्व शांति और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व को विशेष महत्व दिया गया। वे मानते थे कि अंतरराष्ट्रीय विवादों का समाधान युद्ध के माध्यम से नहीं, बल्कि बातचीत और कूटनीति के माध्यम से किया जाना चाहिए। उन्होंने संयुक्त राष्ट्र की भूमिका का समर्थन किया और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शांति एवं सहयोग को बढ़ावा देने का प्रयास किया। भारत ने निरस्त्रीकरण और परमाणु हथियारों की होड़ को कम करने की आवश्यकता पर भी जोर दिया। नेहरू ने एशिया और अफ्रीका के नव-स्वतंत्र देशों के साथ मजबूत संबंध विकसित करने का प्रयास किया। वे मानते थे कि इन देशों की समस्याएँ काफी हद तक समान हैं और उन्हें मिलकर अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता तथा आर्थिक विकास के लिए काम करना चाहिए। 1955 के बांडुंग सम्मेलन में भारत की सक्रिय भागीदारी इसी दृष्टिकोण का उदाहरण थी।

नेहरू ने उपनिवेशवाद और नस्लीय भेदभाव का भी लगातार विरोध किया। भारत ने एशिया और अफ्रीका के स्वतंत्रता आंदोलनों का समर्थन किया तथा दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद नीति के खिलाफ आवाज उठाई। इससे भारत की अंतरराष्ट्रीय छवि एक ऐसे देश के रूप में बनी जो समानता, स्वतंत्रता और न्याय का समर्थन करता था। गुटनिरपेक्ष आंदोलन के विकास में नेहरू का योगदान विशेष रूप से महत्वपूर्ण रहा। 1961 में बेलग्रेड में आयोजित पहले गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन में भारत ने सक्रिय भूमिका निभाई। नेहरू ने स्पष्ट किया कि गुटनिरपेक्षता किसी शक्ति के प्रति विरोध की नीति नहीं, बल्कि स्वतंत्र निर्णय लेने और विश्व शांति को बढ़ावा देने की नीति है। इस प्रकार, जवाहरलाल नेहरू ने भारत की विदेश नीति को स्वतंत्रता, शांति, गुटनिरपेक्षता, उपनिवेशवाद-विरोध और अंतरराष्ट्रीय सहयोग के आधार पर विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनकी विदेश नीति ने आने वाले वर्षों में भारत की वैश्विक भूमिका के लिए एक मजबूत आधार तैयार किया।

IV. गुटनिरपेक्ष आंदोलन और भारत

गुटनिरपेक्ष आंदोलन का विकास शीत युद्ध के दौर में हुआ, जब विश्व मुख्य रूप से अमेरिका और सोवियत संघ के दो प्रमुख शक्ति-गुटों में विभाजित था। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद एशिया और अफ्रीका के कई देश स्वतंत्र हुए थे। इन नए स्वतंत्र देशों के सामने अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता बनाए रखने, आर्थिक विकास करने और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी स्वतंत्र पहचान स्थापित करने की चुनौती थी। ऐसी स्थिति में इन देशों के लिए यह आवश्यक था कि वे किसी एक महाशक्ति के प्रभाव में आने के बजाय अपनी विदेश नीति स्वतंत्र रूप से निर्धारित कर सकें। इसी आवश्यकता ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन के विकास को बढ़ावा दिया।

गुटनिरपेक्षता का मुख्य उद्देश्य किसी विशेष देश या शक्ति-गुट का विरोध करना नहीं था। इसका मूल विचार यह था कि प्रत्येक देश को अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर स्वतंत्र विदेश नीति अपनाने का अधिकार होना चाहिए। गुटनिरपेक्ष देशों ने विश्व शांति, राष्ट्रीय संप्रभुता, समानता, उपनिवेशवाद के अंत और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को महत्व

दिया। इस आंदोलन ने छोटे और विकासशील देशों को अंतरराष्ट्रीय राजनीति में अपनी बात रखने के लिए एक साझा मंच प्रदान किया।

1955 में इंडोनेशिया के बांडुंग में आयोजित एशियाई-अफ्रीकी सम्मेलन गुटनिरपेक्ष आंदोलन के विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। इस सम्मेलन में एशिया और अफ्रीका के देशों ने उपनिवेशवाद, नस्लवाद और विदेशी हस्तक्षेप का विरोध किया तथा शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और आपसी सहयोग पर जोर दिया। इसके बाद 1961 में यूगोस्लाविया की राजधानी बेलग्रेड में पहला गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन आयोजित किया गया। भारत ने इस सम्मेलन में सक्रिय भूमिका निभाई और गुटनिरपेक्ष आंदोलन के प्रमुख देशों में अपनी स्थिति मजबूत की।

भारत की गुटनिरपेक्ष नीति के पीछे कई कारण थे। भारत अपनी स्वतंत्र विदेश नीति को बनाए रखना चाहता था और किसी भी महाशक्ति के सैन्य या राजनीतिक दबाव से बचना चाहता था। इसके साथ ही भारत को अपने आर्थिक विकास के लिए विभिन्न देशों से सहायता और तकनीकी सहयोग की आवश्यकता थी। इसलिए भारत ने पश्चिमी देशों और सोवियत संघ दोनों के साथ संबंध बनाए रखे, लेकिन किसी एक गुट का स्थायी सदस्य नहीं बना।

भारत ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन के माध्यम से विकासशील देशों की समस्याओं को अंतरराष्ट्रीय मंच पर उठाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारत ने उपनिवेशवाद, नस्लवाद, आर्थिक असमानता और हथियारों की दौड़ का विरोध किया। भारत ने विशेष रूप से निस्स्त्रीकरण और परमाणु हथियारों के नियंत्रण की आवश्यकता पर जोर दिया। भारत का मानना था कि विश्व में स्थायी शांति केवल सैन्य शक्ति से नहीं, बल्कि संवाद, सहयोग और न्यायपूर्ण अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था से स्थापित की जा सकती है।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन ने भारत को विकासशील देशों के बीच अपनी भूमिका मजबूत करने का अवसर दिया। भारत ने एशिया और अफ्रीका के नव-स्वतंत्र देशों के साथ राजनीतिक और आर्थिक सहयोग बढ़ाया। इस मंच के माध्यम से भारत ने अंतरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में विकासशील देशों के लिए अधिक समान अवसरों की मांग भी की। हालाँकि, गुटनिरपेक्ष आंदोलन को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। सदस्य देशों की राजनीतिक व्यवस्था, आर्थिक स्थिति और राष्ट्रीय हित अलग-अलग थे, जिसके कारण सभी मुद्दों पर एक समान दृष्टिकोण बनाना हमेशा संभव नहीं था। कुछ सदस्य देश व्यवहार में किसी एक महाशक्ति के अधिक करीब भी रहे। इसके बावजूद आंदोलन ने लंबे समय तक विकासशील देशों की सामूहिक आवाज को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इस प्रकार गुटनिरपेक्ष आंदोलन भारत की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण अध्याय रहा है। भारत ने इसे केवल महाशक्तियों से दूरी बनाए रखने के माध्यम के रूप में नहीं देखा, बल्कि स्वतंत्र निर्णय, राष्ट्रीय संप्रभुता, विश्व शांति और विकासशील देशों के हितों की रक्षा के मंच के रूप में उपयोग किया। आज गुटनिरपेक्षता का पारंपरिक स्वरूप भले ही बदल गया है, लेकिन इसकी मूल भावना भारत की वर्तमान रणनीतिक स्वायत्तता की नीति में दिखाई देती है।

V. 1962 का भारत-चीन युद्ध

स्वतंत्रता के बाद भारत और चीन के संबंधों की शुरुआत सामान्य रूप से सकारात्मक वातावरण में हुई। दोनों देश एशिया के महत्वपूर्ण और नव-स्वतंत्र राष्ट्र थे तथा भारत ने चीन के साथ शांतिपूर्ण संबंध विकसित करने का प्रयास किया। 1954 में दोनों देशों ने पंचशील के सिद्धांतों पर जोर दिया, जिनमें एक-दूसरे की संप्रभुता का सम्मान, गैर-आक्रमण और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व जैसे विचार शामिल थे। उस समय भारत को उम्मीद थी कि दोनों देश आपसी सहयोग के माध्यम से एशिया में शांति और

स्थिरता को बढ़ावा दे सकते हैं। हालाँकि, भारत और चीन के बीच सीमा विवाद धीरे-धीरे गंभीर होता गया। सीमा के विभिन्न क्षेत्रों में दोनों देशों के दावे अलग-अलग थे। विशेष रूप से अक्साई चिन और पूर्वोत्तर सीमा क्षेत्र से संबंधित विवाद ने दोनों देशों के संबंधों में तनाव बढ़ाया। सीमा पर बढ़ती गतिविधियों और आपसी अविश्वास के कारण स्थिति लगातार खराब होती गई। अंततः अक्टूबर 1962 में चीन ने भारत के विरुद्ध सैन्य कार्रवाई शुरू की और दोनों देशों के बीच युद्ध हुआ।

1962 का युद्ध भारत के लिए एक महत्वपूर्ण राजनीतिक और रणनीतिक अनुभव था। युद्ध के दौरान भारत को सैन्य स्तर पर कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। इस घटना ने भारत की विदेश नीति में सुरक्षा और रक्षा क्षमता के महत्व को स्पष्ट किया। भारत को यह समझ आया कि केवल शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और कूटनीतिक प्रयासों के आधार पर राष्ट्रीय सुरक्षा सुनिश्चित नहीं की जा सकती। इसके लिए मजबूत सैन्य क्षमता और प्रभावी सुरक्षा व्यवस्था भी आवश्यक है। युद्ध के बाद भारत ने अपनी रक्षा क्षमताओं को मजबूत करने पर विशेष ध्यान दिया। सेना के आधुनिकीकरण, सीमा क्षेत्रों में सुरक्षा व्यवस्था और रक्षा संबंधी संसाधनों को बढ़ाने के प्रयास किए गए। भारत ने अन्य देशों के साथ रक्षा और तकनीकी सहयोग भी बढ़ाया। इससे भारत की विदेश नीति में सुरक्षा संबंधी विचारों का महत्व पहले की तुलना में अधिक हो गया।

1962 के युद्ध का एक महत्वपूर्ण प्रभाव यह भी रहा कि भारत की विदेश नीति में आदर्शवाद और यथार्थवाद के बीच संतुलन बढ़ा। भारत ने शांति और गुटनिरपेक्षता की अपनी मूल नीति को समाप्त नहीं किया, लेकिन राष्ट्रीय सुरक्षा को विदेश नीति का महत्वपूर्ण हिस्सा बना दिया। भारत ने यह समझा कि अंतरराष्ट्रीय संबंधों में शांति की इच्छा के साथ अपनी सुरक्षा क्षमता को बनाए रखना भी आवश्यक है। इस युद्ध ने भारत-चीन संबंधों पर लंबे समय तक प्रभाव डाला। दोनों देशों के बीच सीमा विवाद आज भी उनके संबंधों में एक महत्वपूर्ण मुद्दा बना हुआ है। हालाँकि, समय के साथ दोनों देशों ने आर्थिक और कूटनीतिक संबंधों को भी विकसित किया है, लेकिन सीमा और रणनीतिक प्रतिस्पर्धा के कारण संबंधों में चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

इस प्रकार 1962 का भारत-चीन युद्ध स्वतंत्र भारत की विदेश नीति के विकास में एक महत्वपूर्ण मोड़ था। इस घटना ने भारत को अपनी रक्षा क्षमता मजबूत करने, राष्ट्रीय सुरक्षा को प्राथमिकता देने और अंतरराष्ट्रीय संबंधों में अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता का अनुभव कराया। इसके बाद भारत की विदेश नीति में शांति और गुटनिरपेक्षता के साथ-साथ सुरक्षा और रणनीतिक हितों को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला।

VI. 1971 का युद्ध और भारत-सोवियत संबंध

1971 का भारत-पाकिस्तान युद्ध भारत की विदेश नीति और दक्षिण एशिया के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना थी। इस युद्ध की पृष्ठभूमि में पूर्वी पाकिस्तान में उत्पन्न राजनीतिक और मानवीय संकट था। वहाँ राजनीतिक अस्थिरता और हिंसा के कारण बड़ी संख्या में लोग भारत आए। इस स्थिति का भारत की अर्थव्यवस्था, सुरक्षा और सामाजिक व्यवस्था पर भी प्रभाव पड़ा। भारत ने इस संकट को केवल द्विपक्षीय समस्या के रूप में नहीं देखा, बल्कि मानवीय और क्षेत्रीय सुरक्षा के मुद्दे के रूप में भी समझा। दिसंबर 1971 में भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध हुआ। युद्ध के परिणामस्वरूप पाकिस्तान के पूर्वी हिस्से में एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में बांग्लादेश का गठन हुआ। इस घटना से दक्षिण एशिया में भारत की राजनीतिक और रणनीतिक स्थिति मजबूत हुई तथा क्षेत्रीय राजनीति में भारत की भूमिका अधिक प्रभावशाली बनी। इसी अवधि में भारत और सोवियत संघ के बीच 1971 की शांति, मैत्री और सहयोग संधि हुई। इस

संधि ने दोनों देशों के बीच राजनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक संबंधों को मजबूत किया। संकट के समय सोवियत संघ का समर्थन भारत के लिए महत्वपूर्ण था। 1971 की घटनाओं से यह स्पष्ट हुआ कि गुटनिरपेक्षता का अर्थ सभी देशों से दूरी बनाए रखना नहीं था। भारत ने अपनी स्वतंत्र विदेश नीति को बनाए रखते हुए राष्ट्रीय हितों और सुरक्षा आवश्यकताओं के अनुसार अन्य देशों के साथ रणनीतिक सहयोग किया। इस प्रकार 1971 का युद्ध भारत की विदेश नीति में राष्ट्रीय हित, क्षेत्रीय सुरक्षा और रणनीतिक व्यावहारिकता के महत्व को दर्शाता है।

VII. 1991 के बाद विदेश नीति में परिवर्तन

1991 भारत की विदेश नीति के विकास में एक महत्वपूर्ण मोड़ माना जाता है। इस वर्ष सोवियत संघ का विघटन हुआ और विश्व की राजनीतिक व्यवस्था में बड़ा परिवर्तन आया। शीत युद्ध समाप्त होने के बाद अमेरिका एक प्रमुख वैश्विक शक्ति के रूप में उभरा। इसी समय भारत गंभीर आर्थिक संकट से भी गुजर रहा था और देश में आर्थिक सुधारों तथा उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई। इन दोनों परिस्थितियों का भारत की विदेश नीति पर गहरा प्रभाव पड़ा। आर्थिक सुधारों के बाद भारत ने वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ अपने संबंधों को मजबूत करना शुरू किया। विदेश नीति में केवल राजनीतिक और सुरक्षा संबंधों के बजाय व्यापार, विदेशी निवेश, तकनीक, ऊर्जा और आर्थिक सहयोग को भी अधिक महत्व दिया जाने लगा। भारत ने विभिन्न देशों के साथ आर्थिक संबंध बढ़ाए ताकि देश के विकास और औद्योगिक प्रगति को गति मिल सके। इस अवधि में भारत ने अमेरिका और पश्चिमी देशों के साथ अपने संबंधों को धीरे-धीरे मजबूत किया। व्यापार, तकनीक, शिक्षा और निवेश जैसे क्षेत्रों में सहयोग बढ़ा। साथ ही, भारत ने रूस के साथ अपने पुराने रक्षा और रणनीतिक संबंधों को भी बनाए रखा। इससे यह स्पष्ट हुआ कि भारत किसी एक शक्ति पर निर्भर रहने के बजाय विभिन्न देशों के साथ अपने हितों के अनुसार संबंध विकसित करना चाहता था। 1991 के बाद भारत ने एशिया और दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के साथ भी अपने संबंधों पर विशेष ध्यान दिया। 'लुक ईस्ट नीति' के माध्यम से भारत ने आर्थिक और रणनीतिक सहयोग को बढ़ाने का प्रयास किया। इस प्रकार 1991 के बाद भारत की विदेश नीति अधिक व्यावहारिक, आर्थिक हितों पर आधारित और बहुआयामी हो गई। गुटनिरपेक्षता की मूल भावना को बनाए रखते हुए भारत ने बदलती वैश्विक परिस्थितियों के अनुसार अपनी विदेश नीति में आवश्यक बदलाव किए।

VIII. 21वीं सदी में भारत की विदेश नीति

21वीं सदी में भारत की विदेश नीति पहले की तुलना में अधिक व्यापक और व्यावहारिक हो गई है। बदलती वैश्विक परिस्थितियों के कारण भारत अब केवल राजनीतिक और सुरक्षा संबंधों पर ही ध्यान नहीं देता, बल्कि आर्थिक विकास, व्यापार, तकनीक, ऊर्जा, पर्यावरण और वैश्विक सहयोग को भी विदेश नीति का महत्वपूर्ण हिस्सा मानता है। भारत का मुख्य उद्देश्य अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा और आर्थिक हितों को मजबूत करते हुए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी भूमिका को बढ़ाना है। भारत ने अमेरिका के साथ अपने संबंधों को पिछले वर्षों में काफी मजबूत किया है। दोनों देशों के बीच रक्षा, तकनीक, व्यापार और रणनीतिक सहयोग बढ़ा है। इसके साथ ही भारत ने रूस के साथ अपने पारंपरिक रक्षा और ऊर्जा संबंधों को भी बनाए रखा है। इससे भारत की विदेश नीति में संतुलन और स्वतंत्र निर्णय लेने की नीति दिखाई देती है। भारत ने जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ भी अपने रणनीतिक और आर्थिक संबंध मजबूत किए हैं। इन देशों के साथ सहयोग विशेष रूप से समुद्री सुरक्षा,

तकनीक, व्यापार और क्षेत्रीय स्थिरता के क्षेत्रों में बढ़ा है। यूरोपीय देशों के साथ भारत के संबंधों में व्यापार, निवेश, शिक्षा, तकनीक और जलवायु परिवर्तन जैसे मुद्दे महत्वपूर्ण हैं। पश्चिम एशिया के देशों के साथ भारत के संबंध भी ऊर्जा, व्यापार, निवेश और भारतीय समुदाय के कारण महत्वपूर्ण बने हुए हैं। चीन के साथ भारत के संबंध जटिल हैं। दोनों देशों के बीच व्यापारिक संबंध मौजूद हैं, लेकिन सीमा विवाद और क्षेत्रीय प्रभाव को लेकर रणनीतिक प्रतिस्पर्धा भी बनी हुई है। इसलिए भारत चीन के साथ संवाद बनाए रखने के साथ-साथ अपनी सुरक्षा और रणनीतिक क्षमता को भी मजबूत कर रहा है।

आतंकवाद, साइबर सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा सुरक्षा और वैश्विक आर्थिक अस्थिरता आज भारत की विदेश नीति की प्रमुख चुनौतियाँ हैं। भारत इन मुद्दों पर अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने का प्रयास कर रहा है। इस प्रकार 21वीं सदी में भारत की विदेश नीति बहुआयामी, व्यावहारिक और राष्ट्रीय हितों पर केंद्रित दिखाई देती है। भारत विभिन्न देशों के साथ सहयोग करते हुए अपनी स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता और रणनीतिक स्वायत्तता बनाए रखने का प्रयास कर रहा है।

IX. गुटनिरपेक्षता से रणनीतिक स्वायत्तता तक

शीत युद्ध की समाप्ति और सोवियत संघ के विघटन के बाद अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में बड़ा परिवर्तन आया। विश्व पहले की तरह दो प्रमुख शक्ति-गुटों में विभाजित नहीं रहा, इसलिए गुटनिरपेक्षता का पारंपरिक स्वरूप धीरे-धीरे कमजोर हुआ। इसके बावजूद भारत ने स्वतंत्र विदेश नीति और स्वतंत्र निर्णय लेने की मूल भावना को बनाए रखा। वर्तमान समय में भारत रणनीतिक स्वायत्तता को अधिक महत्व देता है। इसका अर्थ है कि भारत किसी एक देश या शक्ति-गुट पर पूरी तरह निर्भर हुए बिना अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर विदेश नीति के निर्णय लेता है। भारत अमेरिका के साथ रक्षा और तकनीकी सहयोग बढ़ा रहा है, वहीं रूस के साथ रक्षा और ऊर्जा संबंध भी बनाए हुए हैं। इसी प्रकार यूरोप, जापान, ऑस्ट्रेलिया और अन्य देशों के साथ भी भारत अपने हितों के अनुसार सहयोग कर रहा है। इस प्रकार रणनीतिक स्वायत्तता को गुटनिरपेक्षता का आधुनिक रूप माना जा सकता है, जिसमें भारत बदलती वैश्विक परिस्थितियों के अनुसार अपने संबंधों को संतुलित रखते हुए राष्ट्रीय हित, सुरक्षा और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता को प्राथमिकता देता है।

X. वर्तमान समय में प्रासंगिकता

वर्तमान समय में विश्व राजनीति तेजी से बदल रही है। अमेरिका और चीन के बीच बढ़ती प्रतिस्पर्धा, रूस और पश्चिमी देशों के बीच तनाव तथा विभिन्न क्षेत्रीय संघर्षों का प्रभाव वैश्विक राजनीति पर दिखाई देता है। ऐसी परिस्थितियों में भारत के लिए अपनी स्वतंत्र विदेश नीति और रणनीतिक स्वायत्तता बनाए रखना महत्वपूर्ण है। भारत को विभिन्न देशों के साथ संबंध रखते हुए अपने राष्ट्रीय हितों और सुरक्षा को प्राथमिकता देनी पड़ती है।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन की मूल भावना आज भी पूरी तरह अप्रासंगिक नहीं हुई है। यद्यपि शीत युद्ध जैसी परिस्थितियाँ समाप्त हो चुकी हैं, लेकिन विकासशील देशों के सामने आर्थिक असमानता, गरीबी, जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा और खाद्य सुरक्षा जैसी कई चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए विकासशील देशों के बीच सहयोग आवश्यक है। भारत वैश्विक दक्षिण के देशों की समस्याओं को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर उठाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। भारत का अनुभव और बढ़ती वैश्विक भूमिका उसे विकसित और विकासशील देशों के बीच संवाद को

बढ़ावा देने में सक्षम बनाती है। इस प्रकार गुटनिरपेक्षता की मूल भावना—स्वतंत्र निर्णय, समानता, सहयोग और राष्ट्रीय हितों की रक्षा—आज भी भारत की विदेश नीति में महत्वपूर्ण बनी हुई है।

XI. निष्कर्ष

स्वतंत्रता के बाद भारत की विदेश नीति का विकास देश की बदलती राष्ट्रीय आवश्यकताओं और अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों के साथ हुआ है। स्वतंत्रता के शुरुआती वर्षों में भारत ने गुटनिरपेक्षता, विश्व शांति, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व, उपनिवेशवाद-विरोध और राष्ट्रीय संप्रभुता को अपनी विदेश नीति का आधार बनाया। जवाहरलाल नेहरू ने इस नीति को विकसित करने और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की स्वतंत्र पहचान स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। समय के साथ भारत की विदेश नीति में आवश्यक बदलाव आए। 1962 के भारत-चीन युद्ध ने राष्ट्रीय सुरक्षा और रक्षा क्षमता के महत्व को स्पष्ट किया, जबकि 1971 के युद्ध और भारत-सोवियत संबंधों ने भारत की रणनीतिक सोच को प्रभावित किया। भारत की परमाणु नीति ने भी उसकी सुरक्षा और रणनीतिक क्षमता को मजबूत किया। 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद व्यापार, निवेश, तकनीक और आर्थिक विकास विदेश नीति के महत्वपूर्ण विषय बन गए।

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद गुटनिरपेक्षता का पारंपरिक स्वरूप कमजोर हुआ, लेकिन स्वतंत्र निर्णय लेने की इसकी मूल भावना बनी रही। वर्तमान समय में भारत रणनीतिक स्वायत्तता के माध्यम से विभिन्न देशों के साथ अपने संबंधों को राष्ट्रीय हितों के आधार पर संतुलित करने का प्रयास करता है। भारत अमेरिका, रूस, यूरोप, जापान, ऑस्ट्रेलिया और अन्य देशों के साथ अलग-अलग क्षेत्रों में सहयोग कर रहा है। इस प्रकार, भारत की विदेश नीति में समय के साथ महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं, लेकिन इसकी मूल प्राथमिकताएँ—राष्ट्रीय हितों की रक्षा, स्वतंत्र निर्णय, राष्ट्रीय सुरक्षा, अंतरराष्ट्रीय सहयोग और विश्व शांति—आज भी महत्वपूर्ण बनी हुई हैं। बदलती वैश्विक परिस्थितियों में भारत का प्रयास एक ऐसी विदेश नीति बनाए रखना है जो देश की सुरक्षा और विकास को सुनिश्चित करने के साथ-साथ विश्व स्तर पर भारत की भूमिका को भी मजबूत करे।

संदर्भ सूची

- [1] गुहा, आर. (2007). इंडिया आफ्टर गांधी: द हिस्ट्री ऑफ द वर्ल्ड्स लाजेंस्ट डेमोक्रेसी. हार्पर कॉलिन्स.
- [2] नेहरू, जे. (1946). द डिस्कवरी ऑफ इंडिया. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
- [3] पंत, एच. वी. (2016). इंडियन फॉरेन पॉलिसी: एन ओवरव्यू. मैनचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस.
- [4] बंदोपाध्याय, जे. (1970). द मेकिंग ऑफ इंडियाज फॉरेन पॉलिसी: डिटरमिनेंट्स, इंस्टीट्यूशंस, प्रोसेससेज एंड पर्सनैलिटीज. एलाइड पब्लिशर्स.
- [5] भारत सरकार, विदेश मंत्रालय. (2023). वार्षिक प्रतिवेदन 2022-2023. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार. <https://www.mea.gov.in>
- [6] मेलोन, डी. एम. (2011). डज द एलिफेंट डांस?: कंटेम्परी इंडियन फॉरेन पॉलिसी. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

[7] मेलोन, डी. एम., मोहन, सी. आर., एवं राघवन, एस. (संपा.). (2015). द ऑक्सफोर्ड हैंडबुक ऑफ इंडियन फॉरेन पॉलिसी. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

[8] संयुक्त राष्ट्र. (1945). संयुक्त राष्ट्र का चार्टर. संयुक्त राष्ट्र संघ. <https://www.un.org/en/about-us/un-charter>